रांची, शुक्रवार, 24 .05 .2019

# राष्ट्रपति की शक्तियों से युक्त प्रधानमंत्री

लोकतंत्र की राष्ट्रपति प्रणाली में एक राष्ट्रपति को दी जानेवाली शक्तियों से युक्त प्रधानमंत्री मोदी की फिर दिल्ली की गद्दी पर वापसी हुई. लगता है कि नरेंद्र मोदी ने भारत की जनता को कम से कम मौजूदा वक्त के लिए एक मजबूत, आक्रामक तथा विकासात्मक हिंदुत्व अंगीकार कर लेने को बाध्य कर दिया है. उन्होंने इन संसदीय चुनावों को राष्ट्रपतीय जनमतसंग्रह में तब्दील कर देने में सफलता हासिल की. उनकी 'स्थायी चुनावी मोड' की कार्यशैली ने देश के 543 लोकसभा निर्वाचन क्षेत्रों को केवल एक राष्ट्रीय निर्वाचन क्षेत्र में बदल दिया, जिससे भाजपा को आशातीत फायदे मिले.

पीएम मोदी की राष्ट्रपतीय शक्ति तीन संबद्ध स्रोतों के नतीजे हैं. पहला है हिंदू बहुसंख्यकों पर आंतरिक एवं बाह्य खतरों के गहराई से अशांतिजनक मगर राजनीतिक रूप से लाभदायक विचार को फैलाना. इसमें उन्होंने भारत में बहुवाद, विविधता एवं धर्मनिरपेक्षता के पारंपरिक विचारों को चुनौती दी. हाल में मैं बनारस में था, जहां मैंने काशी के नये शासक के रूप में उनका उदय देखा, जहां बनारसियों ने काशी विश्वनाथ मंदिर एवं गंगा के बीच एक विस्तृत गलियारे के निर्माण हेतु इन दोनों के मध्य स्थित कई मंदिरों समेत अन्य मकानों को गिराने की उनकी योजना को कार्यरूप देने की अनुमति दी.

दूसरा, टीवी तथा सोशल मीडिया ने मोदी के राष्ट्रपतीय नेतृत्व में नयी कार्यविधि तथा प्रतीक जोड़ दिये. राजनीतिक विश्लेषक उनके संप्रेषण की शैलीगत सफलताएं अब तक भी नहीं पहचान सके हैं. जब बनारस के गोदौलिया चौक पर सत्तर से ऊपर की उम्र के दिनेश ने मुझसे यह कहा वे अपनी वृद्धावस्था का अवसाद छांटने को नियमित रूप से 'मन की बात' सुना करते हैं, तो मुझे अचरज नहीं हुआ. सार्वजनिक एवं निजी मीडिया द्वारा प्रसारित एकजुटता के इस बोध ने, जिसे खासकर अगड़ी जातियों, अति पिछड़ी जातियों समेत दलितों के एक हिस्से द्वारा व्यापक रूप से साझा किया जा रहा है, इन वर्गों को उभरते भाजपा की रीढ़ बना डाला है.

**प्रो अश्वनी कुमार**
राजनीतिक विश्लेषक
ashwanitiss@gmail.com

खुदरा राजनीति के माहौल में नीतियों के अलग-अलग क्षेत्रों को सामने रखने की बजाय मोदी ने आम जनों और वर्गों को व्यक्तित्व तथा चरित्र के अत्यंत भावोद्वेलक 'थोक' सियासत से सम्मोहित कर लिया.

तीसरा, अपनी साधारण पृष्ठभूमि एवं गुजराती खरेपन से मोदी ने 2019 के इन चुनावों को 'युद्ध के नैतिक समानार्थी' की हैसियत दे दी. इसने विरोधी पार्टियों को न केवल सत्ता की लालच में जुटे महामिलावटी झुंड का रूप दे दिया, बल्कि उत्तर भारत में जाति की शक्ति भी काफी हद तक कुंद कर डाली. इसलिए अचरज नहीं कि मोदी की अतिव्यक्तिवादी सियासी मुहिम ने करिश्मा कर दिखाया, जबकि कांग्रेस का एक अधिक विकेंद्रीकृत एवं अव्यक्तिवादी अभियान केवल जहां-तहां ही सफलता पा सका. खुदरा राजनीति के माहौल में नीतियों के अलग-अलग क्षेत्रों को सामने रखने की बजाय मोदी ने आम जनों और वर्गों को व्यक्तित्व तथा चरित्र के अत्यंत भावोद्वेलक 'थोक' सियासत से सम्मोहित कर लिया. यही वजह है कि वे अपने संपूर्ण अभियान में इस पर जोर देते रहे कि वे प्रतिदिन 20 घंटे तक काम करते हुए बहुत कम नींद से काम चलाते हैं. 'ठंडा मतलब कोका कोला' की विज्ञापन मुहिम की ही भांति मोदी खुद को 'विकासपंथी राजनीति' के सबसे बड़े ब्रांड के रूप में प्रस्तुत करने में सफल रहे. 2019 के ये चुनाव संदेश देने की इसी शक्ति के साक्षी बन गये. राजनीति की धारा बदल कर रख देनेवाली उनकी सियासी मार्केटिंग की मिसाल के तौर पर उत्तर प्रदेश के भदोही जिले में उनके द्वारा दिये गये भाषण को लिया जा सकता है. इस मुसलिम मतदाता बहुल जिले में उन्होंने कहा कि 'आजादी के बाद चार तरह का शासन, पार्टियां और राजनीतिक संस्कृति सामने आयी- 'नामपंथी' (वंशवादी), वामपंथी, दाम और दमनपंथी तथा हमलोगों द्वारा लायी गयी विकासपंथी.' अन्य किसी भी चीज की अपेक्षा एक 'विकासपंथी' की इस वैसी मजबूत छवि की मार्केटिंग ने, जो पाकिस्तान को उसके किये की सजा दे सकता है, मोदी को वापस सत्ता के सिंहासन तक पहुंचा दिया.

इसके विपरीत, कांग्रेस नीत विरोधी पार्टियां किसानों का दर्द, बेरोजगारी या नोटबंदी की मुश्किलें जैसी बिखरी छवियों के साथ एक उभरते भारत के लिए एक प्रेरणादायक उत्पाद की बजाय संघर्षात्मक सियासी मुहिम में फंसी रह गयीं. मैंने इस दौरान उत्तर प्रदेश, बिहार एवं झारखंड में व्यापक यात्राएं कीं और मुझे कांग्रेस का कहीं कोई एक भी ऐसा नामलेवा न मिला, जिसने मुझसे उसके बहु-प्रचारित 'न्याय' की चर्चा की हो. यूपी एवं बिहार के अधिकतर मतदाताओं ने मुझसे यही कहा कि 'मोदी को एक और कार्यकाल मिलना ही चाहिए.'

निष्कर्ष स्वरूप, मोदी की विजय में भारत के पुनर्निर्माण के सभी संकेत उपस्थित हैं. यह 'लोकतांत्रिक तानाशाही' अथवा 'नौकरशाही की निरंकुशता' जैसी जोखिम भी प्रस्तुत करती है. यह एक व्यक्तिवादी एवं आधिपत्यवादी नेतृत्व की प्रवृत्ति भी मजबूत करती है. मोदी के साथ और उनके बाद भी भारत में भविष्य के राष्ट्रपतीय प्रधानमंत्री का पद भविष्य में ज्यादा आक्रामक रूप से केंद्रीकृत तथा प्रणाली परिवर्तक नेतृत्व का गवाह बनेगा.

(अनुवाद : विजय नंदन)

# मोदी के विकास को जनादेश

भारतीय जनता पार्टी भारी बहुमत से सरकार बनाने जा रही है. कांग्रेस ने दो साल पहले कैंब्रिज एनालिटिका कंपनी को हायर किया था और कांग्रेस को भरोसा था कि यह कंपनी भारत में झूठ फैलाकर और फेक न्यूज का प्रचार करके नरेंद्र मोदी के काम को ढक देगी. गरीबों के लिए और अति पिछड़ों के लिए मोदी जी ने जो काम किया है, उसको कांग्रेस ने झूठ का प्रचार बना लिया था. लेकिन कांग्रेस के खिलाफ वोट करके हमारे भारतीय लोकतंत्र के प्रबुद्ध जनमत ने समझदारी दिखायी है और यहां के सुधी मतदाताओं ने सही फैसला किया है. मैं समझता हूं कि यह जनादेश बहुत शानदार है.

साल 2019 का चुनाव उसी तरह का है, जैसा 1957 का चुनाव था. इन दोनों चुनावों में मैं कुछ समानताएं देखता हूं. ऐसा मानने का मेरा आधार यह है कि साल 1952 में जवाहरलाल नेहरू को मिली जीत के बाद जब 1957 का चुनावा आया, तब नेहरू की कई विफलताएं सामने आयीं. फिर भी उस वक्त की जनता ने नेहरू को दोबारा चुना. नरेंद्र मोदी भी साल 2014 से लेकर कई मोरचे पर विफल रहे हैं, फिर भी जनता ने उन्हें आज दोबारा चुन लिया है. लेकिन, एक बड़ी समानता यह है कि साल 1952 में नेहरू के सामने उनकी पार्टी के और बाहर के भी कई दिग्गज नेता थे, जिनके मुकाबले उन्हें चुनाव में उतरना पड़ा. इसी तरह 2014 के चुनाव में नरेंद्र मोदी के सामने बराबर के और बड़े नेता उनकी पार्टी और बाहर दोनों जगह थे, लेकिन साल 2019 में नरेंद्र मोदी के सामने कोई भी नहीं है. यह सिर्फ इसलिए नहीं है कि नरेंद्र मोदी प्रधानमंत्री हैं, बल्कि इसलिए कि नरेंद्र मोदी ने बहुत शानदार काम किया है. कठोर परिश्रम और गरीबों के लिए रात-दिन काम करने के लिए नरेंद्र मोदी में जो माद्दा है, वह किसी और नेता में नहीं है.

नरेंद्र मोदी ने एक इंटरव्यू में कहा था- 'हमने पांच साल गरीबों की आवश्यकताओं पर ध्यान दिया और अब आगे पांच साल हम देश के गरीब और अति पिछड़ों की आकांक्षाओं पर ध्यान देंगे.' नरेंद्र मोदी का यह वाक्य उनके पिछले पांच साल के कार्यकाल को परिभाषित करता है. जिन लोगों ने मोदी पर तमाम आरोप लगाये और झूठ-मूठ की बातें फैलायीं, उस पर मतदाताओं ने अपने निर्णय से करारी चपत लगायी है.

हमारे देश में तीन तरह की राजनीति एक लंबे समय से चलती चली आ रही थी- वंशवादी राजनीति, जाति-पात की राजनीति और एक बनावटी सेक्युलरिज्म की राजनीति. इन तीनों तरह की राजनीति की विदाई हो गयी है इस चुनाव में. इन्हीं तीनों राजनीति के आधार पर कांग्रेस और कई क्षेत्रीय पार्टियों ने देशभर में अपनी ओछी राजनीति की, जिसको जनता ने नकार दिया. नरेंद्र मोदी के ऊपर आरोप चाहे जो हों, लेकिन तथ्य यह बता रहे हैं कि उन्होंने गरीबों के लिए जिन कल्याणकारी योजनाओं को लागू किया, उसमें उन्होंने हिंदू-मुसलमान का भेद नहीं किया, जाति नहीं देखी, बल्कि जो जरूरतमंद हैं, उनके लिए काम किया. तमाम परियोजनाओं को जनता के लिए लेकर आये, ताकि देश का निर्माण एक आयाम स्थापित कर सके.

**रामबहादुर राय**
वरिष्ठ पत्रकार
rbrai118@gmail.com

इस चुनाव परिणाम से भारत का लोकतंत्र और भी मजबूत होगा. इसमें सबकी भागीदारी सुनिश्चित हो, यह आश्वासन मोदी जी ने पहले ही दे दिया था, इसलिए जनता ने उनके आश्वासन को स्वीकार कर अपना जनादेश सुना दिया है.

नरेंद्र मोदी की सबसे खास बात यह रही कि अगर कोई तमिलनाडु के लिए योजना है, तो उन्होंने चेन्नई में जाकर उसे हरी झंडी दिखायी. अगर उत्तर प्रदेश के गरीबों के लिए योजना है, तो उन्होंने उत्तर प्रदेश के किसी अति पिछड़े जिले में जाकर उसका उद्घाटन किया. ऐसा पहली बार था जब किसी प्रधानमंत्री मोदी ने सभी योजनाओं को लेकर अपनी तैयारी और रणनीति को बाकी सभी नेताओं से बिल्कुल अलग रखा.

इस नतीजे का बहुत बड़ा संदेश यह भी है कि सपा और बसपा के मिल जाने मात्र से ही वे मैदान जीत लेंगे, यह हवा फुस्स हो गयी. बसपा को हमने बहुत नजदीक से देखा है. कांशीराम से मेरा मिलना-जुलना रहा था. कांशीराम ने जिस तरह से बसपा को खड़ा किया था, उसमें एक जाति नहीं बल्कि बहुजन को शामिल किया था. लेकिन, आज की बसपा उससे बिल्कुल अलग है. उत्तर प्रदेश में अति पिछड़ी जातियां ज्यादातर एक समय में कभी सपा के साथ रहती थीं, तो कभी बसपा के साथ थीं. लेकिन, आज वे सभी अति पिछड़ी जातियां नरेंद्र मोदी और भाजपा के साथ हैं. यह सबका साथ सबका विकास की राजनीति का ही नतीजा है.

कहा जाता रहा है कि लोकतंत्र में विकास नहीं हो सकता. लेकिन, नरेंद्र मोदी ने इस अवधारणा को गलत साबित कर दिया है. मोदी ने यह कर दिखाया है कि लोकतंत्र की विविधता में अगर ईमानदार नेतृत्व हो और उसका इरादा मजबूत हो, तो वह नेता एक चमत्कारी परिणाम ला सकता है. यह बात नरेंद्र मोदी ने अपने कड़े फैसलों से साबित कर दिया है. चाहे जीएसटी का मामला हो या फिर मुसलमान और किसानों का मामला हो, कांग्रेस कहती रही है कि व्यापारी, गरीब, मुसलमान और किसान सब संकट में हैं, कांग्रेस के इस झूठ का कोई आधार नहीं था. कुछ समस्याएं रही होंगी जरूर, लेकिन जाति-धर्म देखकर नरेंद्र मोदी ने कोई काम किया हो, इस चुनाव परिणाम से साबित किया है कि लोगों ने फिर एक बार मोदी सरकार पर भरोसा जताया है.

जैसा कि मैंने पहले कहा कि यह चुनाव साल 1957 के जैसा चुनाव रहा, जिसमें यह बात सामने आयी है कि मोदी की कुछ विफलताओं पर ध्यान न देकर जनता ने उनके बड़े-बड़े कामों और विकास की भावी योजनाओं को चुना. मोदी की 18 घंटे काम करने की जो क्षमता है, उस पर लोगों ने पांच साल और देने का निर्णय किया है और इस निर्णय से यह भी उम्मीद है कि नरेंद्र मोदी एक बार फिर जनता की उम्मीदों पर खरा उतरेंगे और देश-समाज को एक नयी ऊंचाई पर ले जायेंगे.

इस चुनाव परिणाम से सबसे बड़ी बात यह साबित होने जा रही है कि अब भारत का लोकतंत्र और भी मजबूत होगा. इसमें सबकी भागीदारी सुनिश्चित हो, यह आश्वासन मोदी जी ने पहले ही दे दिया था, इसलिए जनता ने उनके आश्वासन को स्वीकार कर अपना जनादेश सुना दिया है. मुझे पूरा विश्वास है कि आगामी पांच साल भी मोदी जी विकास को ही प्राथमिकता देंगे.

(वसीम अकरम से बातचीत पर आधारित)

# बिहार की राजनीति का अगला पड़ाव

**मनींद्र नाथ ठाकुर**
एसोसिएट प्रोफेसर, जेएनयू
manindrat@gmail.com

भाजपा ने बिहार में जदयू को सीमांचल की सभी सीटें दे दी थी, जबकि आम तौर पर माना जाता है कि वहां सांप्रदायिक ध्रुवीकरण करना आसान था और भाजपा आसानी से वहां जीत ही रही थी. ऐसे में भाजपा-जदयू के बीच 17-17 सीटों पर लड़ना भाजपा का मास्टर स्ट्रोक था.

लोकसभा का चुनाव परिणाम एक बार फिर से एनडीए के पक्ष में गया है. कांग्रेस फिर कोई कमाल नहीं दिखा पायी है और बाकी पार्टियों का भी कुछ ऐसा ही हाल है. जहां तक बिहार की बात है, तो परिणाम यही बताते हैं कि बिहार में एक बड़ा बदलाव हुआ है. यानी बिहार में जो पुराना जातिगत गठबंधन चल रहा था, उससे भी अलग चीजें हुई हैं. अब एक नया माहौल बना है, जिसमें जनता दल यूनाइटेड (जदयू) का जो अपना समर्थन आधार है अन्य पिछड़ा वर्ग और निचली जातियों का, वह अब भाजपा की ऊंची जातियों के साथ जाकर जुड़ गया है. जदयू के साथ मिलकर यह एक नये तरह का गठबंधन तैयार किया है भाजपा ने, जो बहुत ठोस गठबंधन है.

इस ठोस गठबंधन से टक्कर लेने के लिए विपक्षी ताकतों को नये तरीके से सोचना होगा कि अब सिर्फ जाति की राजनीति करने से काम नहीं चलेगा. अब इसमें तीन चीजों को एक साथ जोड़ा पड़ेगा- सामाजिक न्याय, कल्याणकारिता और विकास. राष्ट्रीय जनता दल (आरजेडी) अगर कांग्रेस के साथ मिलकर काम करना चाहती है, तो आरजेडी का सामाजिक न्याय, कांग्रेस की कल्याणकारिता के साथ एक नये तरह के विकास का मॉडल बनाना होगा, ताकि वह तबका जो भाजपा के साथ नहीं है, उसको जोड़ा जा सके. अब सिर्फ जातिगत गठबंधन के आधार पर जीत पाना संभव नहीं है. अगर ऐसा होता, तो सिर्फ बिहार ही नहीं, उत्तर प्रदेश के साथ ही बाकी राज्यों में भी यह राजनीति काम करती और तब परिणाम कुछ और होता.

बीते पांच सालों में बिहार में विकास के मुद्दे खूब उठाये जाते रहे हैं. नीतीश सरकार के विकास कार्यक्रमों को सराहा भी जाता रहा. सड़कें और बिजली की व्यवस्था बहुत हद तक सुधर गयी है और इसीलिए लोगों की महत्वाकांक्षाएं भी बढ़ी हैं. अब वहां पलायन भी कुछ कम हुआ है. एक अरसा पहले तक बिहार के लोगों दूसरे राज्यों में जो पलायन की विभीषिका को झेलनी पड़ी है, महाराष्ट्र से बिहार के लोगों को भगाये जाने का मुद्दा बड़ा था. लेकिन, अब पलायन को लेकर बिहार में काफी जागरूकता आयी है. बिहार के लोग अब विकास कार्यों को न सिर्फ देखना चाहते हैं, बल्कि उसमें अपनी भूमिका भी निभा रहे हैं. इस आधार पर बिहार की राजनीति में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का एक नया चेहरा बना है. अब आगे देखना होगा कि भाजपा की सांप्रदायिक राजनीति से नीतीश कुमार कैसे बचते हैं और कौन हावी होता है. बतौर मुख्यमंत्री अगर नीतीश कुमार का ही विकास कार्य हावी रहता है, जैसा कि पहले के जमाने में भाजपा-जदयू के गठबंधन पर सांप्रदायिकता कभी हावी नहीं हो पाती थी, तो अगले पांच साल में बिहार का मॉडल क्या होता है, यह देखना दिलचस्प होगा.

भाजपा की एक खास रणनीति यह है कि वह राज्यवार अपना मॉडल निर्धारित करती है और उसी आधार पर चुनावों में उतरती है. राज्यवार ब्योरों को इकट्ठा करना और वहां की सामाजिक-सांस्कृति स्थितियों को समझकर ही वह चुनावी रणनीति बनाती है. सबसे खास बात यह है कि भाजपा जिसके साथ गठबंधन करती है, उसके साथ दिल से करती है, भाजपा की इस राजनीतिक खासियत को इनकार नहीं किया जा सकता है, जो ज्यादा सीटों को बटोरने का हथियार बन जाता है.

उदाहरण के लिए फिर बिहार में आये चुनाव परिणाम को ही देख लीजिये. भाजपा ने बिहार में जदयू को सीमांचल की सभी सीटें दे दी थी, जबकि आम तौर पर माना जाता है कि वहां सांप्रदायिक ध्रुवीकरण करना आसान था और भाजपा आसानी से वहां जीत ही रही थी. ऐसे में भाजपा-जदयू के बीच 17-17 सीटों पर लड़ना भाजपा का मास्टर स्ट्रोक था. मास्टर स्ट्रोक इसलिए, क्योंकि कोई भी पार्टी आज के दौर में अपनी जीतनेवाली सीटों को अपने सहयोगी पार्टी देने का रिस्क नहीं ले सकती. इसलिए यह संभव है कि अब भाजपा बिहार में एक नये तरह का मॉडल विकसित करेगी. ऐसे में यहां विपक्षी पार्टियों के लिए कई चुनौतियां बढ़ जायेंगी. क्योंकि, आज भी लालू प्रसाद यादव और उनके बच्चों को विकास के मसीहा के रूप में नहीं समझा जा रहा है.

एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि जिस तरह से इस बार का चुनाव प्रेसिडेंशियल इलेक्शन की तरह लड़ा गया, जिसमें हर जगह सिर्फ मोदी ही लड़ रहे थे. अगर कोई लड्डू भी बनाता दिखा, तो वह भी मोदी जी का मुखौटा पहनकर बनाता दिखा. यह एक नया ट्रेंड है भारतीय राजनीति में कि चुनाव भले कोई भी लड़ रहा हो, लेकिन लोग वोट मोदी के नाम पर ही देने लगे हैं. इसका क्या जवाब होगा विपक्ष के पास, यह सोचना इतना आसान नहीं है. क्योंकि ब्रांडिंग के लिए मोदी जी के पास बहुत कुछ है, पैसा है, पावर है, मीडिया है, व्यक्तित्व है, वाणी है और मजबूत संगठन है. इस तरह का प्रचार तंत्र किसी और पार्टी के पास नहीं है. इसलिए आनेवाली पांच साल की राजनीति बहुत ही रचनात्मक होगी.

अब कुछ दिन में केंद्र में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एनडीए की नयी सरकार का गठन हो जायेगा. मेरे ख्याल से अब यह मौका आ गया है कि गांधी, नेहरू, लोहिया और आंबेडकर के साथ संवाद कर विपक्ष आपसी साझेदारी के साथ एक नया राजनीतिक मॉडल विकसित करे, जिसमें सामाजिक न्याय भी हो, सर्वधर्म समभाव भी हो और विकास भी हो. इन सभी चीजों के एक साथ सही तरीके से मिलने पर ही संभव है कि भाजपा की राजनीतिक काट हासिल हो सके. अब यह संभव नहीं है कि नेता दिल्ली में पांच साल बैठे रहें और चुनाव के समय जाकर वोट मांग आयें और जनता उन्हें वोट कर देगी. अब उन्हें जनता के बीच जाकर पकड़ बनानी होगी.

भाजपा का जो पार्टी संगठन है, वह बहुत बड़ा और मजबूत है. भाजपा अपने एक-एक प्रत्याशी को उतारते समय तीन तरह का डेटा इकट्ठा करती है. बिहार में हो या किसी अन्य राज्य में, हर जगह भाजपा ने इसी तरह से प्रत्याशी उतारे थे. दूसरी महत्वपूर्ण बात पैसे की है. आज के दौर में चुनाव इस कदम महंगे हो गये हैं कि कोई भी साधारण आदमी चुनाव लड़ने की सोच ही नहीं सकता है. अब तक तो फंडिंग करनेवाले बड़े-बड़े बिजनेसमैन यह सोचते थे कि थोड़ा इस पार्टी को दे दो और थोड़ा उस पार्टी को दे दो. लेकिन, इस बार देखा गया है कि सभी फंडरों ने सबसे ज्यादा भाजपा को फंड दिया. ऐसे में चुनाव लड़ने के लिए विपक्ष के पास पैसा कहां से आयेगा, यह सोचना होगा. इसका एक विकल्प तो आज बिहार ने ही दिया है. बिहार के बेगुसराय से चुनाव लड़े कन्हैया कुमार ने क्राउड फंडिंग के जरिये सत्तर लाख रुपये जुटा लिया था, यह एक तरीका हो सकता है. कन्हैया ने जिस तरह से जनता के बीच से सत्तर लाख रुपये का इंतजाम किया, वह एक शानदार मॉडल है. हालांकि, कन्हैया कुमार को सफलता हासिल नहीं हो पायी, लेकिन इससे नाउम्मीदी नहीं, बल्कि एक विश्वास ही पैदा हुआ है. इस तरीके का इस्तेमाल करके विपक्षी पार्टियां या फिर कोई भी ईमानदार आदमी पैसे की कमी को खत्म कर सकता है और चुनाव लड़कर देश की राजनीति में एक नया आयाम दे सकता है. अब पूरे विपक्ष को गांधी से सीखना पड़ेगा कि जब आप कमजोर होते हैं, तो रचनात्मक काम करना बहुज जरूरी हो जाता है.

# दक्षिण भारत मोदी के असर से अछूता

**आर राजागोपालन**
वरिष्ठ पत्रकार
rajagopalan1951@gmail.com

दक्षिण भारत में क्षेत्रीय दलों की इन जीतों के बाद भाजपा पक्के तौर पर अपने भविष्य की योजना तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश को ध्यान में रखते हुए तैयार करेगी.

दक्षिण भारत में तेलुगु देशम, तेलंगाना राष्ट्र समिति, द्रमुक, अन्ना द्रमुक, जनता दल (सेकुलर), वायएसआर कांग्रेस दक्षिण भारत के प्रमुख क्षेत्रीय दल हैं. चंद्रबाबू नायडू और एमके स्टालिन ने उत्तर भारतीय मतदाताओं के मन-मस्तिष्क को नहीं समझा. द्रमुक और टीडीपी ने मोदी को कमतर आंका. यही वह सीख है, जिसे 2019 में नरेंद्र मोदी की जीत से सीखा जा सकता है.

दक्षिण भारत के लिए इस चुनाव का अभिप्राय यह है कि दक्षिण और उत्तर भारत के बीच पूर्ण विभाजन है. मोदी ने राजनीतिक तौर पर चंद्रबाबू नायडू को मात दे दी है. अब नायडू अपना मुंह कहां दिखायेंगे? नायडू द्वारा किये गये सभी वादों का अब क्या होगा? आंध्र प्रदेश की राजधानी अमरावती क्या उन्होंने बनायी? कंप्यूटीकरण के चैंपियन होने के नाते क्या चंद्रबाबू नायडू ईवीएम मुद्दे पर आयेंगे और उसमें खराबी होने को दोष देंगे? नायडू ने अपनी कहानी खत्म कर दी. वे दिल्ली, लखनऊ और कोलकाता में व्यस्त रहे हैं. वे एक जगह से दूसरी जगह जाते रहे हैं. उनके राजनीतिक रसूख का क्या होगा? तेलुगु देशम पर आंध्र प्रदेश में ग्रहण लग गया है. एनडीए सरकार से असमय अपना समर्थन वापस लेने के कारण भाजपा ने टीडीपी को सबक सिखाया. दो वर्षों के लिए नायडू ने आंध्र प्रदेश के विकास को अवरुद्ध कर दिया और उसे पीछे धकेल दिया.

दूसरी तरफ जगन रेड्डी नियमित तौर पर मतदाताओं का समर्थन जुटाते रहे. वे तभी से सक्रिय रहे हैं, जब उनके पिता वायएस राजशेखर रेड्डी की मृत्यु के बाद राहुल गांधी और सोनिया गांधी द्वारा उन्हें दरकिनार कर दिया गया था. उन्होंने तेलुगु देशम के आधार को समाप्त कर दिया है. क्या चंद्रबाबू नायडू अब राष्ट्रीय जनतांत्रित गठबंधन से बाहर आने के लिए पश्चाताप करेंगे? क्या उन्हें 2014 में मिले लोकप्रिय जनादेश के साथ विश्वासघात करने के कारण तो दरकिनार नहीं किया गया, जो उन्हें नरेंद्र मोदी के कारण मिला था?

दक्षिण के आठ मुख्य क्षेत्रीय दलों की राष्ट्रीय राजनीति में इस बार कोई प्रासंगिकता नहीं है. कारण, मोदी ने एकतरफा जीत दर्ज की है. वर्ष 2014 में जयललिता ने तमिलनाडु की 39 में 37 सीटें जीती थीं. वे राष्ट्रीय राजनीति में अप्रासंगिक थीं. उन्हें केवल लोकसभा उपाध्यक्ष का पद मिला और वे एस थंबीदुरई हैं. अभी तमिलनाडु में डीएमके प्रमुख विजेता है. एमके स्टालिन को चाहे जितनी भी सीटें मिले, डीएमके अप्रासंगिक रहेगी. वह डीएमके ही थी, जिसने कहा कि मोदी वापस जाओ. उसका क्या हुआ? वह डीएमके ही थी उसने राहुल गांधी को प्रधानमंत्री के तौर पर पेश किया था. उसका क्या हुआ? वे स्टालिन ही थे, जिन्होंने सोचा था कि राहुल गांधी प्रधानमंत्री बन रहे हैं.

दक्षिण भारत उत्तर भारत के राजनीतिक मिजाज को नहीं पढ़ पाया, जहां भाजपा ने भारी कामयाबी हासिल की है. दक्षिणी राज्यों में राष्ट्रवाद मुद्दा नहीं है, जबकि पुलवामा और बालाकोट उत्तर भारत में चुनावी भाषणों का प्रमुख विषय था. ऐसा दक्षिण में नहीं था. हालांकि, कर्नाटक और तेलंगाना में हिंदुत्व निश्चित रूप से एक मुद्दा था, लेकिन तमिलनाडु में क्या स्थिति है? मोदी और अमित शाह अब तमिलनाडु पर अपना ध्यान केंद्रित करेंगे. उत्तर का बाद वे दक्षिण का रुख करेंगे. अगले साल तमिलनाडु में कभी भी चुनाव हो सकते हैं. भाजपा वहां त्रिपुरा की तरह प्रदर्शन करना चाहेगी.

साल 2020 या 2021 में मोदी और शाह यह सुनिश्चित करने का प्रयास करेंगे कि दक्षिण भारत से 2024 के आम चुनाव में 130 में से कम-से-कम 50 सीटें भाजपा को मिलें. भाजपा अपनी तैयारी पांच साल पहले कर लेती है और वह राहुल गांधी की कांग्रेस की तरह नहीं है, जो भारत को पिछले दशकों में ले जाना चाहती है.

आप चाहे जैसे इस लोकसभा चुनाव का विश्लेषण करें, यह दक्षिणी राज्यों के लिए निश्चित रूप से एक धक्का है. और, क्षेत्रीय दलों की इन जीतों के बाद भाजपा पक्के तौर पर अपने भविष्य की योजना तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश को ध्यान में रखते हुए तैयार करेगी.

# आत्ममंथन करे वाम नेतृत्व

**प्रसेनजित बोस**
वामपंथी अर्थशास्त्री
boseprasenjit@gmail.com

**भारतीय** जनता पार्टी ने साल 2014 के अपने प्रदर्शन को सुधारते हुए अधिक मत प्रतिशत और सीटें हासिल की है. यह स्थिति विपक्ष की तरफ से हुईं अनेक गलतियों का परिणाम है.

विपक्ष अधिक से अधिक त्रिशंकु लोकसभा दे सकता था, जिसे मतदाताओं ने निर्णायक रूप से नकार दिया है. विपक्ष के पास न तो कोई संयुक्त वैकल्पिक कार्यक्रम था और न ही कोई प्रभावी राष्ट्रीय गठबंधन, जो भाजपा के ताकतवर प्रचार और संगठन तंत्र के सामने भरोसेमंद चुनौती पेश कर सकता था. धर्मनिरपेक्ष दलों की अधिकतर ऊर्जा एक-दूसरे से लड़ने में ही खर्च हुई, न कि भाजपानीत राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन से एक सामूहिक लड़ाई पेश करने में. सभी धर्मनिरपेक्ष पार्टियों को आत्मालोचना करनी चाहिए और सुधार के उपाय करने चाहिए, बजाय इसके कि चुनावी नतीजों को तय करने में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन की भूमिका को बहुत ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने में ये दल अपना समय गंवायें.

यह चुनाव विशेष रूप से मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व वाले लेफ्ट पार्टियों के लिए चिंताजनक है. तमिलनाडु के अलावा इन पार्टियों को हर जगह मुंह की खानी पड़ी है. तमिलनाडु में ये दल द्रमुकनीत गठबंधन का हिस्सा थे. पश्चिम बंगाल में वाम मोर्चे ने अपना लगभग सारा जनाधार भारतीय जनता पार्टी के हाथों गंवा दिया है. तृणमूल कांग्रेस और कांग्रेस को भी नुकसान उठाना पड़ा है. भाजपा को दो कारणों से फायदा मिला है- तृणमूल सरकार के खिलाफ जोरदार सत्ता-विरोधी लहर और ठोस सांप्रदायिक ध्रुवीकरण. बंगाल में आगामी दिनों में प्रगतिशील एवं जनवादी ताकतों को राज्य के बहुत पुरानी धर्मनिरपेक्ष परंपरा को बचाने के लिए बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ेगा.

बेगुसराय में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के कन्हैया कुमार ने एक अनुकरणीय प्रचार अभियान चलाया था. वे 22 प्रतिशत से अधिक मत पाकर बड़े अंतर से दूसरे स्थान पर रहे हैं. यदि इस उम्मीदवार के लिए कांग्रेस और राष्ट्रीय जनता दल ने सीट छोड़ दी होती, तो मुकाबला काफी नजदीकी हो सकता था.

वामपंथी पार्टियों के नेतृत्व को बहुत गंभीरता से इस प्रश्न पर आत्ममंथन करना चाहिए कि पिछले एक दशक से भारत में वामपंथी राजनीति लगातार गिरावट के दौर से क्यों गुजर रही है. पूरी तरह से वैचारिक, राजनीतिक एवं सांगठनिक फेर-बदल से ही वामपंथी राजनीति को अस्तित्वविहीन होने से बचाया जा सकता है.